राजस्थान उच्च न्यायालय

जयपुर बेंच

एस.बी. सिविल रिट याचिका संख्या 21135/2018

बसंत राम मौर्य पुत्र स्वर्गीय श्री जय राम मौर्य, आयु लगभग 68 वर्ष, निवासी मकान नंबर 7, मोनिका विहार-I, मानसरोवर, जयपुर। (वरिष्ठ नागरिक)

----याचिकाकर्ता

बनाम

1. राजस्थान राज्य,जरिये प्रमुख सचिव, वन विभाग, सचिवालय, जयपुर।
2. सचिव, कार्मिक विभाग (ए 3/शिकायतें), सचिवालय, जयपुर।
3. प्रधान मुख्य वन संरक्षक, राजस्थान, अरण्य भवन, झालाना संस्थागत क्षेत्र, जयपुर।
4. निदेशक, पेंशन एवं पेंशनर्स कल्याण, राजस्थान, जयपुर।

----उत्तरदाता

याचिकाकर्ता (ओं) की ओर से : श्री सुरेंद्र सिंह

उत्तरदाता (ओं) की ओर से : श्री धीरज त्रिपाठी, एजीसी
श्री राहुल लोढ़ा, एजीसी

जस्टिस अनूप कुमार ढंड

<u>आदेश</u>

28/01/2025

रिपोर्टयोग्य

---

1. आपराधिक कानून का स्वर्णिम नियम यह है कि किसी व्यक्ति को 'दोषी सिद्ध होने तक निर्दोष' माना जाएगा।

2. निर्दोषता की धारणा एक कानूनी सिद्धांत है जिसके अनुसार किसी भी अपराध का आरोपी प्रत्येक व्यक्ति तब तक निर्दोष माना जाता है जब तक कि उसका अपराध सिद्ध न हो जाए। इस प्रकार, अभियुक्त के विरुद्ध अपने मामले को उचित संदेह से परे साबित करने का भार अभियोजन पक्ष पर होता है। यदि मुकदमे में उचित संदेह बना रहता है, तो अभियुक्त को बरी किया जा सकता है।

3. कई देशों में और सामान्य कानून सहित कई कानूनी प्रणालियों के तहत, निर्दोषता की धारणा आपराधिक मुकदमे में अभियुक्त का कानूनी अधिकार है। मानवाधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा, 1948 के अनुच्छेद 11.1 के तहत, इसे मानवाधिकार के रूप में भी मान्यता प्राप्त है। अनुच्छेद 11.1 इस प्रकार है:-

> "11.1 दंडनीय अपराध के आरोपी प्रत्येक व्यक्ति को तब तक निर्दोष माना जाएगा जब तक कि वह सार्वजनिक सुनवाई में कानून के अनुसार दोषी साबित न हो जाए, जिसमें उसे अपने बचाव के लिए आवश्यक सभी गारंटी मिल चुकी हों।"

4. नागरिक एवं राजनीतिक अधिकारों पर अंतर्राष्ट्रीय वाचा, 1966, जिसका भारत एक पक्ष है, के अनुच्छेद 9.1 में निम्नानुसार उल्लेख किया गया है:-

> "किसी को भी उसकी स्वतंत्रता से ऐसे आधारों पर और ऐसी प्रक्रिया के अनुसार ही वंचित किया जाएगा जो कानून द्वारा स्थापित हों;"

5. मानवाधिकारों और मौलिक स्वतंत्रताओं के संरक्षण के लिए यूरोपीय कन्वेंशन के अनुच्छेद 6(1) में प्रावधान है कि आरोपित प्रत्येक व्यक्ति को 'निष्पक्ष'सुनवाई का अधिकार है और अनुच्छेद 6(2) में निम्नलिखित कहा गया है:-

> "अनुच्छेद 6(2) किसी आपराधिक अपराध के आरोपी प्रत्येक व्यक्ति को तब तक निर्दोष माना जाएगा जब तक कि वह कानून के अनुसार दोषी साबित न हो जाए।"

6. अफ्रीकी मानव एवं जन अधिकार चार्टर के अनुच्छेद 7 (बी) और कनाडाई अधिकार एवं स्वतंत्रता चार्टर की धारा 11 (डी) में यह प्रावधान है कि अभियुक्त को तब तक निर्दोष माना जाएगा जब तक कि वह दोषी साबित न हो जाए।

7. उपरोक्त सभी दस्तावेज मूल और मौलिक मानव अधिकार की घोषणा करते हैं जिसका जिनका उपभोग प्रत्येक व्यक्ति करने का अधिकारी है और ऐसे अधिकारों के प्रभावी उपभोग को सुनिश्चित एवं सुगम बनाना राज्यों का दायित्व है। कई देशों ने निर्दोषता की धारणा को संवैधानिक अधिकार का दर्जा दिया है। निर्दोषता की धारणा जीवन के अधिकार और व्यक्तिगत स्वतंत्रता के मौलिक मूल्यों के प्रति दृष्टिकोण को आकार देती है। लेकिन आपराधिक न्याय प्रणाली में नियम

के इस सुनहरे सूत्र को भारतीय संविधान या आपराधिक कानूनों में विशेष रूप से शामिल नहीं किया गया है। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 की व्यापक रूप से व्याख्या की है, जिससे निष्पक्ष सुनवाई के अधिकार सहित कई अधिकार जीवन के अधिकार के दायरे में आ गए हैं। हालाँकि, निर्दोषता की धारणा को भारत के संविधान के भाग III के तहत मौलिक अधिकार के स्तर तक नहीं बढ़ाया गया है। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **नूर आगा बनाम पंजाब राज्य मामले में 2008 (16) एससीसी 417** में यह निर्णय दिया है कि, "निर्दोषता की धारणा एक मानवाधिकार है, जैसा कि नागरिक एवं राजनीतिक अधिकारों पर अंतर्राष्ट्रीय वाचा के अनुच्छेद 14(2) के अंतर्गत परिकल्पित है। हालाँकि, इसे भारतीय संविधान के अनुच्छेद 21 में प्रदत्त मौलिक अधिकार और स्वतंत्रता के समकक्ष नहीं माना जा सकता।

8. प्रत्येक अभियुक्त को तब तक निर्दोष माना जाता है जब तक कि उसका दोष सिद्ध न हो जाए। निर्दोषता की यह धारणा केवल एक कानूनी सिद्धांत ही नहीं, बल्कि एक मौलिक मानवाधिकार भी है। हालाँकि इस नियम के कुछ वैधानिक अपवाद भी हैं, फिर भी यह आपराधिक न्यायशास्त्र की आधारशिला है। जब कोई क़ानून दोष की धारणा भी बनाता है, तब भी उसे भारतीय संविधान के अनुच्छेद 14 और 21 में निहित तर्कसंगतता और स्वतंत्रता के मानकों को पूरा करना होगा। संदेह, चाहे कितना भी प्रबल क्यों न हो, प्रमाण का विकल्प नहीं हो सकता।

"सत्य हो सकता है" और "सत्य होना ही चाहिए" के बीच एक महत्वपूर्ण अंतर होता है, और धारणा को सभी उचित संदेहों से परे अपना मामला साबित करके इस दूरी को पाटना चाहिए। लेकिन, एक बार जब कोई अभियुक्त अपने विरुद्ध लगाए गए कथित आरोपों से बरी हो जाता है, तो उसके विरुद्ध आपराधिक मामले की कार्यवाही समाप्त हो जाती है और उसके बरी होने के फैसले के विरुद्ध अपील दायर करने मात्र को आपराधिक मुकदमे का निरंतर भाग नहीं माना जा सकता, जब तक कि अपील स्वीकार न कर ली जाए और अभियुक्त की बरी होने का निर्णय रद्द न कर दिया जाए।

9. अब, इस न्यायालय के विचारणीय मुद्दा यह है कि "क्या आपराधिक मामले में याचिकाकर्ता के बरी होने के बाद भी, सरकारी अधिकारी याचिकाकर्ता (पेंशनभोगी) की सेवानिवृत्ति देय राशि और उपदान को केवल इसलिए रोक सकते हैं क्योंकि राज्य ने उसके बरी होने के फैसले के खिलाफ अपील प्रस्तुत की है?"

10. इस याचिका के माध्यम से याचिकाकर्ता प्रतिवादियों के खिलाफ ब्याज सहित उपदान की राशि जारी करने के निर्देश मांग रहा है।

11. याचिकाकर्ता के अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि याचिकाकर्ता भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 (संक्षेप में '1988 का अधिनियम') की धारा 13(1)(ई)(2)) के तहत अपराध के लिए विशेष न्यायाधीश, भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, मामलों,

जयपुर की अदालत में मुकदमे का सामना कर रहा था और उसे 20.07.2007 के फैसले के तहत सभी आरोपों से बरी कर दिया गया था। अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि उसके बाद, याचिकाकर्ता 30.04.2008 को सेवानिवृत्ति की आयु प्राप्त करने पर सेवानिवृत्त हो गया, लेकिन 16 साल से अधिक समय बीत जाने के बावजूद, आज तक याचिकाकर्ता को उपदान की राशि जारी नहीं की गई है। अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि याचिकाकर्ता की उपदान राशि रोकने का कारण यह है कि याचिकाकर्ता को बरी करने के फैसले के खिलाफ राज्य द्वारा अपीलीय न्यायालय के समक्ष एक आपराधिक अपील दायर की गई है। अधिवक्ता का निवेदन है कि दोषमुक्ति के निर्णय के विरुद्ध आपराधिक अपील दायर किया जाना, उपदान की राशि के भुगतान को रोके रखने का आधार नहीं हो सकता। अपने तर्कों के समर्थन में, उन्होंने इस न्यायालय की समन्वय पीठ द्वारा **वीरेंद्र कुमार सिंघल बनाम अध्यक्ष एवं प्रबंध निदेशक, राजस्थान राज्य विद्युत उत्पादन निगम लिमिटेड एवं अन्य (एसबी सिविल रिट याचिका संख्या 16994/2016)** मामले में 25.10.2017 को निर्णीत निर्णय का हवाला दिया है। अधिवक्ता का कहना है कि प्रतिवादियों को ब्याज सहित उपदान की राशि जारी करने के लिए उचित निर्देश दिए जाएँ।

12. इसके विपरीत, प्रतिवादियों के विद्वान अधिवक्ता ने याचिकाकर्ता के अधिवक्ता द्वारा उठाए गए तर्कों का विरोध किया और प्रस्तुत किया कि याचिकाकर्ता ने 1988 के अधिनियम की धारा 13 (1) (ई) (2) के तहत अपराध के लिए

मुकदमे का सामना किया। हालांकि, उन्हें 20.07.2007 के फैसले के तहत ट्रायल कोर्ट द्वारा बरी कर दिया गया था, लेकिन उक्त फैसले के खिलाफ, राज्य द्वारा अपील की गई है और यह अपीलीय न्यायालय के समक्ष लंबित है, और चूंकि अपील को मुकदमे की निरंतरता के रूप में माना जाता है, इसलिए, इन परिस्थितियों में, याचिकाकर्ता राजस्थान सिविल सेवा (पेंशन) नियम, 1996 (संक्षेप में '1996 के नियम') के नियम 90 (सी) के अनुसार उपदान की राशि पाने का हकदार नहीं है। अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि इन परिस्थितियों में इस न्यायालय का हस्तक्षेप अपेक्षित नहीं है।

13. बार में प्रस्तुत किए गए तर्कों को सुना और उन पर विचार किया तथा रिकार्ड पर उपलब्ध सामग्री का अवलोकन किया।

14. 1996 के नियम 7 और नियम 90(सी) के संयुक्त अध्ययन से पता चलता है कि यदि किसी दोषी कर्मचारी के खिलाफ कोई न्यायिक कार्यवाही लंबित है, तो उपदान राशि रोकी जा सकती है और केवल अनंतिम पेंशन जारी की जा सकती है।

15. यह तथ्य निर्विवाद है कि याचिकाकर्ता के विरुद्ध सेवानिवृत्ति से पूर्व, 1988 के अधिनियम की धारा 13(1)(ई)(2) के अंतर्गत एक आपराधिक मामला लंबित था, लेकिन भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम मामलों के विशेष न्यायाधीश की अदालत ने दिनांक 20.07.2007 के निर्णय द्वारा उसे सभी आरोपों से बरी कर दिया था।

निस्संदेह, प्रतिवादी राज्य ने अपीलीय न्यायालय में अपील दायर करके उपरोक्त निर्णय का विरोध किया है और उक्त अपील अभी भी अपीलीय न्यायालय के समक्ष विचाराधीन है। यह तथ्य भी निर्विवाद है कि बरी होने के बाद, याचिकाकर्ता 30.04.2008 को अधिवर्षिता की आयु प्राप्त करने पर सेवानिवृत्त हो गया।

16. पठन संदर्भ हेतु नियम 1996 के नियम 7 और 90 निम्नानुसार पुनः प्रस्तुत किए गए हैं:

"7. राज्यपाल का पेंशन रोकने या वापस लेने का अधिकार

(1) राज्यपाल को यह अधिकार है कि वह पेंशन या उसके किसी भाग को, चाहे स्थायी रूप से या किसी विनिर्दिष्ट अवधि के लिए रोक ले या वापस ले ले, तथा सरकार को हुई किसी भी आर्थिक हानि की पूरी या आंशिक राशि पेंशन से वसूल करने का आदेश दे, यदि किसी विभागीय या न्यायिक कार्यवाही में पेंशनभोगी अपनी सेवा की अवधि के दौरान, जिसमें सेवानिवृत्ति के बाद पुनः नियोजन पर की गई सेवा भी शामिल है, गंभीर कदाचार या लापरवाही का दोषी पाया जाता है:

परन्तु यह कि कोई भी अन्तिम आदेश पारित करने से पूर्व राजस्थान लोक सेवा आयोग से परामर्श किया जाएगा:

परन्तु यह और कि जहां पेंशन का कोई भाग रोक लिया जाता है या वापस ले लिया जाता है, वहां ऐसी पेंशन की राशि [प्रति माह आठ हजार आठ सौ पचास रुपये] से कम नहीं की जाएगी।]

(2) (क) उपनियम (1) में निर्दिष्ट विभागीय कार्यवाहियां, यदि सरकारी सेवक के सेवाकाल के दौरान, चाहे उसकी सेवानिवृत्ति से

पूर्व या उसकी पुनर्नियुक्ति के दौरान, संस्थित की गई हों, तो सरकारी सेवक की अंतिम सेवानिवृत्ति के पश्चात्, इस नियम के अधीन कार्यवाही समझी जाएंगी और जिस प्राधिकारी द्वारा उन्हें प्रारंभ किया गया था, उसी प्रकार जारी रखी जाएंगी और समाप्त की जाएंगी मानो सरकारी सेवक सेवा में बना रहा हो:

परन्तु जहां विभागीय कार्यवाही राज्यपाल के अधीनस्थ किसी प्राधिकारी द्वारा शुरू की जाती है, वहां वह प्राधिकारी अपने निष्कर्षों को दर्ज करते हुए राज्यपाल को एक रिपोर्ट प्रस्तुत करेगा।

(ख) विभागीय कार्यवाही, यदि सरकारी कर्मचारी के सेवाकाल के दौरान, चाहे उसकी सेवानिवृत्ति से पहले, या उसकी पुनर्नियुक्ति के दौरान, संस्थित नहीं की गई हो –

(i) राज्यपाल की मंजूरी के बिना स्थापित नहीं किया जाएगा,

(ii) ऐसी किसी घटना के संबंध में नहीं होगा जो ऐसी स्थापना से चार वर्ष से अधिक पूर्व घटित हुई हो, और

(iii) ऐसे प्राधिकारी द्वारा और ऐसे स्थान पर संचालित किया जाएगा जैसा राज्यपाल निर्देशित करें तथा विभागीय कार्यवाहियों पर लागू प्रक्रिया के अनुसार किया जाएगा जिसमें सरकारी सेवक के सेवाकाल के दौरान उसके संबंध में सेवा से बर्खास्तगी का आदेश दिया जा सकता है।

(3) कोई भी न्यायिक कार्यवाही, यदि सरकारी कर्मचारी के सेवाकाल के दौरान, चाहे उसकी सेवानिवृत्ति से पूर्व या उसकी पुनर्नियुक्ति के दौरान, संस्थित नहीं की गई है, तो ऐसे वाद हेतुक के संबंध में, जो ऐसे संस्थित किए जाने से चार वर्ष से अधिक

पूर्व उत्पन्न हुआ हो, या किसी घटना के संबंध में संस्थित नहीं की जाएगी।

(4) ऐसे सरकारी कर्मचारी के मामले में, जो अधिवर्षिता की आयु प्राप्त करने पर या अन्यथा सेवानिवृत्त हो गया है और जिसके विरुद्ध कोई विभागीय या न्यायिक कार्यवाही संस्थित है या जहां उपनियम (2) के अधीन विभागीय कार्यवाही जारी है, नियम 90 में उपबंधित अनंतिम पेंशन स्वीकृत की जाएगी:

[परन्तु ऐसे सरकारी कर्मचारी के मामले में, जिसके विरुद्ध राजस्थान सिविल सेवा (वर्गीकरण, नियंत्रण एवं अपील) नियम, 1958 के नियम 17 के अधीन विभागीय कार्यवाही संस्थित की गई है, उक्त नियम के नियम 14 के खण्ड (i) एवं (ii) में विनिर्दिष्ट कोई शास्ति अधिरोपित करने के लिए, शत-प्रतिशत अंतिम उपदान का भुगतान किया जाएगा।]

(5) जहां राज्यपाल पेंशन रोकने या वापस न लेने का निर्णय लेता है, किन्तु पेंशन से आर्थिक हानि की वसूली का आदेश देता है, वहां वसूली सामान्यतः सरकारी कर्मचारी की सेवानिवृत्ति की तारीख को अनुमन्य पेंशन के एक तिहाई से अधिक दर पर नहीं की जाएगी।

(6) इस नियम के प्रयोजनार्थ, -

(क) विभागीय कार्यवाही उस तारीख को संस्थित मानी जाएगी जिस तारीख को आरोप, उन आरोपों के विवरण सहित जिन पर वे आधारित हैं, या अनुशासनात्मक कार्रवाई करने का सरकार का प्रस्ताव, उन आरोपों सहित जिन पर उसे किए जाने का प्रस्ताव है, सरकारी कर्मचारी या पेंशनभोगी को जारी किया जाता है, या यदि

सरकारी कर्मचारी को पहले की तारीख से निलंबित किया गया है, तो ऐसी तारीख को; और

(ख) न्यायिक कार्यवाही निम्नलिखित के अंतर्गत संस्थित मानी जाएगी –

(i) आपराधिक कार्यवाही के मामले में, उस तारीख को जिस दिन पुलिस अधिकारी की शिकायत या रिपोर्ट, जिसका मजिस्ट्रेट संज्ञान लेता है, की जाती है, और

(ii) सिविल कार्यवाही के मामले में, जिस तारीख को वादपत्र न्यायालय में प्रस्तुत किया जाता है।

नियम 90. जहां विभागीय या न्यायिक कार्यवाही लंबित है वहां अनंतिम पेंशन और अनंतिम सेवानिवृत्ति उपदान।

(1) (क) नियम 7 के उपनियम (4) में निर्दिष्ट सरकारी सेवक के संबंध में, निदेशक, पेंशन विभाग, राजस्थान, नियुक्ति प्राधिकारी से अनंतिम पेंशन की स्वीकृति के साथ पेंशन प्रकरण प्राप्त होने पर, सरकारी सेवक की सेवानिवृत्ति की तिथि तक अर्हक सेवा के आधार पर अनुमन्य अधिकतम पेंशन के बराबर अनंतिम पेंशन प्राधिकृत करेगा, या यदि वह सेवानिवृत्ति की तिथि को निलम्बित था, तो निलम्बन की तिथि से ठीक पहले की तिथि तक अनुमन्य होगी:

परन्तु ऐसे मामलों में, जहां किसी कारणवश पेंशन प्रकरण अंतिम रूप से तैयार नहीं किया जा सका हो, नियुक्ति प्राधिकारी नियम 86 के उपनियम (3) में निर्धारित प्रक्रिया का पालन करते हुए प्ररूप 33 में अनंतिम पेंशन स्वीकृत करेगा तथा विभागीय जांच के अंतिम रूप दिए जाने तक प्रकरण को अनंतिम पेंशन भुगतान आदेश जारी करने के लिए निदेशक, पेंशन को भेजेगा।

(ख) अनंतिम पेंशन, सेवानिवृत्ति की तारीख से प्रारंभ होकर उस तारीख तक, जिस तारीख को विभागीय या न्यायिक कार्यवाही के समापन के पश्चात सक्षम प्राधिकारी द्वारा अंतिम आदेश पारित किया जाता है, पेंशन विभाग के निदेशक द्वारा अधिकृत की जाएगी:

[परन्तु उपनियम (1) के अधीन संदत्त अनंतिम पेंशन से कोई वसूली नहीं की जाएगी, जहां अंतिम रूप से स्वीकृत पेंशन अनंतिम पेंशन से कम है या पेंशन स्थायी रूप से या किसी विनिर्दिष्ट अवधि के लिए कम कर दी गई है या रोक ली गई है]

(ग) नियम 7 के उपनियम (4) में निर्दिष्ट सरकारी सेवक के संबंध में, अनंतिम सेवानिवृत्ति उपदान का भुगतान निम्नानुसार किया जा सकता है:-

(i) ऐसे सरकारी कर्मचारी की उपदान राशि का पचास प्रतिशत, जिसके विरुद्ध राजस्थान सिविल सेवा (वर्गीकरण, नियंत्रण एवं अपील) नियम, 1958 के नियम 16 के अधीन विभागीय कार्यवाही संस्थित की गई हो या जिसके विरुद्ध नैतिक अधमता या इस पदीय कर्तव्य से संबंधित अपराध से संबंधित आपराधिक मामला लंबित हो; और

(ii) उस सरकारी कर्मचारी को उपदान की राशि का बीस प्रतिशत, जिसके विरुद्ध गृह निर्माण अग्रिम की राशि गृह निर्माण अग्रिम की स्वीकृति के समय सेवानिवृत्ति उपदान में से वसूली के लिए अलग रखी गई है या सरकारी आवास के मकान किराए के विरुद्ध देय है।]

[(2) उप-नियम (1) के खंड (ग) के अंतर्गत भुगतान की गई अनंतिम सेवानिवृत्ति उपदान

(i) विभागीय कार्यवाही या न्यायिक कार्यवाही के समापन पर ऐसे सरकारी कर्मचारी को स्वीकृत अंतिम सेवानिवृत्ति ग्रेच्युटी के विरुद्ध समायोजित किया जाएगा और यदि भुगतान की गई राशि देय राशि से अधिक है तो ऐसी अतिरिक्त राशि वसूल की जाएगी; और

(ii) उस सरकारी सेवक से वसूल किया जाएगा, जिसे राजस्थान सिविल सेवा (वर्गीकरण, नियंत्रण एवं अपील) नियम, 1958 के नियम 16 के अधीन विभागीय कार्यवाही के अंतिम रूप देने पर सेवा से हटाया या पदच्युत किया गया हो या उसके पदीय कर्तव्य से संबंधित नैतिक अधमता या अपराध से संबंधित आपराधिक मामला हो]

17. उपरोक्त प्रावधानों के अवलोकन से यह स्पष्ट रूप से कहीं भी नहीं कहा गया है कि यदि बरी होने के आदेश के विरुद्ध कोई अपील दायर की जाती है, तो बरी होने के बाद भी सेवानिवृत्ति लाभ जारी नहीं किए जाएँगे। इसका अर्थ यह है कि बरी होने के निर्णय के विरुद्ध दायर अपील के निर्णय से पहले सेवानिवृत्ति लाभ जारी न करने पर योजना में कोई प्रतिबंध नहीं लगाया गया है। इस संबंध में, इस न्यायालय ने **एआईआर 1977 एससी 1268** में दर्ज **नारायण प्रभु वेंकटेश्वर प्रभु बनाम नारायण प्रभु कृष्ण प्रभु** के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय पर विचार किया है, जिसमें माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने पैरा संख्या 16 में निम्नानुसार टिप्पणी की थी:-

"16. जहाँ तक इस न्यायालय में अपील के प्रश्न का संबंध है, यह सत्य है कि धनवसूली का वाद में अपील के निर्णय के विरुद्ध अधिकार के रूप में कोई अपील नहीं की जा सकती, किन्तु, हमारा विचार है कि प्रतिवादियों के विद्वान अधिवक्ता का यह तर्क सही है कि क्या पूर्व-न्यायिकता पर प्रतिबन्ध है, यह प्रश्न दोनों निर्णयों के

विरुद्ध समान प्रकृति की अपील के अधिकार के अस्तित्व पर निर्भर नहीं करता, बल्कि इस प्रश्न पर निर्भर करता है कि क्या धारा 11 में दी गई परिस्थितियों में एक ही मुद्दे पर सुनवाई की गई है और अंतिम रूप से निर्णय दिया गया है। उच्च न्यायालय द्वारा अपने समक्ष प्रस्तुत दोनों अपीलों में ऐसा करना निश्चित रूप से अपेक्षित था, जो निःसंदेह पक्षकारों के अपील के अधिकार के अधीन है। केवल यह तथ्य कि प्रतिवादी अपीलकर्ता विभाजन के वाद में असंशोधित अनुच्छेद 133(1)(ग) के अंतर्गत मामले के उपयुक्तता प्रमाण-पत्र के माध्यम से अधिकार के रूप में इस न्यायालय में अपील कर सकता था, निर्णय की अंतिमता को समाप्त नहीं कर सकता, जहाँ तक उच्च न्यायालय ने धन वसूली का वाद का निर्धारण किया था और उस निर्णय की सत्यता या अंतिमता पर प्रश्न उठाने का किसी भी प्रकार का कोई प्रयास नहीं किया गया था। यहां तक कि अपील के लिए विशेष अनुमति के आवेदन के माध्यम से भी।"

18. इस संबंध में कानून पूरी तरह से स्थापित है कि केवल अपील लंबित रहने पर सेवानिवृत्ति लाभों को रोकने का कोई आधार नहीं है। इस न्यायालय की समन्वय पीठों द्वारा पारित निर्णयों/आदेशों की श्रृंखला ने इस संबंध में कानून की स्थिति को स्पष्ट कर दिया है।

18.1 वीरेंद्र कुमार सिंघल बनाम अध्यक्ष एवं प्रबंध निदेशक, राजस्थान राज्य विद्युत उत्पादन निगम लिमिटेड एवं अन्य (एसबी सिविल रिट याचिका संख्या 16994/2016) 25 अक्टूबर 2017 को निर्णीत, इस न्यायालय की समन्वय पीठ ने माना कि, यह एक सुस्थापित कानून है कि उच्च न्यायालय में दायर आपराधिक पुनरीक्षण को पेंशन नियम 1966 के नियम 7 के अर्थ में किसी व्यक्ति के विरुद्ध आपराधिक मुकदमे या आपराधिक कार्यवाही की निरंतरता नहीं कहा जा सकता है, और इसलिए, नियम 90(1)(सी) के अंतर्गत निहित प्रतिबंध उस व्यक्ति के

आपराधिक अपराध से मुक्त होने के बाद लागू नहीं होगा। इस प्रकार, केवल आपराधिक पुनरीक्षण के लंबित रहने या उस मामले में, किसी निर्वहन या बरी होने के विरुद्ध किसी अपील के कारण, जैसा भी मामला हो, किसी व्यक्ति को नियमित सेवा लाभों से वंचित नहीं किया जा सकता है।

18.2 जगन राम बनाम राजस्थान राज्य और अन्य (एस.बी. सिविल रिट याचिका संख्या 19178/2015) में 08.02.2019 को निर्णय दिया गया, इस न्यायालय की समन्वय पीठ द्वारा यह माना गया कि याचिकाकर्ता को दिनांक 17-7-2006 के निर्णय द्वारा बरी किए जाने के खिलाफ अपील के लंबित रहने को "न्यायिक कार्यवाही" का लंबित रहना नहीं माना जा सकता है, जो प्रतिवादियों को याचिकाकर्ता की ग्रेच्युटी, कम्यूटेशन या उस मामले के लिए 31-8-2008 को याचिकाकर्ता की सेवानिवृत्ति के बाद देय किसी भी अन्य सेवानिवृत्ति लाभ को रोकने का अधिकार देता है।

18.3 प्रसन्न कुमार जैन बनाम नेशनल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड एवं अन्य (एस.बी. सिविल रिट याचिका संख्या 8932/2009) में दिनांक 08.07.2015 को निर्णय देते हुए, जोधपुर स्थित मुख्य पीठ में इस न्यायालय की समन्वय पीठ ने माना है कि, तथ्य यह है कि याचिकाकर्ता को सक्षम आपराधिक न्यायालय द्वारा लगाए गए आपराधिक आरोपों से बरी कर दिया गया था, इसलिए प्रतिवादी याचिकाकर्ता को सेवानिवृत्ति लाभ देने से इनकार नहीं कर सकते, क्योंकि सेवानिवृत्ति लाभ जारी करने के उद्देश्य से योजना में कोई रोक नहीं है।

18.4 गोमा भूरा राम बनाम राजस्थान राज्य और अन्य (एस.बी. सिविल रिट याचिका संख्या 12859/2016) में, जिसका निर्णय 31.01.2018 को हुआ था, इस न्यायालय की समन्वय पीठ ने माना है कि, बरी करने के आदेश के खिलाफ

अपीलीय न्यायालय के समक्ष अपील का लंबित होना, सेवानिवृत्त व्यक्ति को उसके सेवानिवृत्ति लाभों से वंचित करने का आधार नहीं हो सकता है।

19. इसी तरह, सुप्रीम कोर्ट ने **(2013) 12 एससीसी 210 [झारखंड राज्य एवं अन्य बनाम जितेंद्र कुमार श्रीवास्तव एवं अन्य]** मामले में बहुत स्पष्ट रूप से कहा है कि पेंशन नियमों में किसी प्रावधान के अभाव में, राज्य सरकार विभागीय/आपराधिक कार्यवाही के लंबित रहने के दौरान भी पेंशन और/या ग्रेच्युटी का कोई हिस्सा नहीं रोक सकती है। हालांकि, उक्त मामले में सुप्रीम कोर्ट ने बिहार पेंशन नियमों के प्रावधानों पर विचार किया है, लेकिन उपरोक्त मामले में सुप्रीम कोर्ट द्वारा लागू की गई सादृश्यता का वर्तमान मामले पर सीधा प्रभाव पड़ता है। उपरोक्त मामले में सुप्रीम कोर्ट ने एक कर्मचारी के पेंशन प्राप्त करने के अधिकार पर भी चर्चा की है और यह भी कहा है कि पेंशन में उपदान शामिल है। **जितेंद्र कुमार श्रीवास्तव (उपरोक्त)** मामले में सुप्रीम कोर्ट द्वारा की गई टिप्पणियां इस प्रकार हैं:-

> "7. संत राम शर्मा बनाम राजस्थान राज्य, एआईआर 1967 एससी 1910 के फैसले पर आधारित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता की उपरोक्त दलीलें वर्तमान मामले में कोई असर नहीं डालेंगी, क्योंकि इस मामले में उस केस की कोई प्रयोज्यता नहीं है। संत राम के फैसले में यह कहा गया कि प्रशासनिक कानून के क्षेत्र को नियंत्रित करता है जिसमें संविधान पीठ ने यह सिद्धांत प्रतिपादित किया था कि किसी अधिनियम में निहित शक्तियों के प्रयोग में प्राधिकारी द्वारा बनाए गए नियमों में वैधानिक बल भी होगा। हालांकि प्रशासन सुचारू रूप से प्रशासनिक कार्य के लिए प्रशासनिक निर्देश जारी कर सकता है, लेकिन ऐसे प्रशासनिक निर्देश नियमों का स्थान नहीं ले सकते। हालांकि, ये प्रशासनिक निर्देश उन स्थितियों का ध्यान रखते हुए वैधानिक नियमों

का पूरक हो सकते हैं जहां वैधानिक नियम मौन हैं। उस फैसले का यह अनुपात निम्नलिखित तरीके से वर्णित है:(ए.आई.आर प.1914 ,पेरा 7)

> 7. ....यह सच है कि नियमों में कनिष्ठ या वरिष्ठ श्रेणी के अधिकारियों को चयन श्रेणी के पदों पर पदोन्नति के सिद्धांत को निर्धारित करने वाला कोई विशिष्ट प्रावधान नहीं है। लेकिन इसका मतलब यह नहीं है कि जब तक इस संबंध में वैधानिक नियम नहीं बन जाते, सरकार संबंधित अधिकारियों को चयन श्रेणी के पदों पर पदोन्नति में अपनाए जाने वाले सिद्धांत के बारे में प्रशासनिक निर्देश जारी नहीं कर सकती। यह सच है कि सरकार प्रशासनिक निर्देशों द्वारा वैधानिक नियमों में संशोधन या उनका स्थान नहीं ले सकती, लेकिन यदि किसी विशेष विषय पर नियम मौन हों, तो सरकार उस रिक्ति की पूर्ति कर सकती है, नियमों का अनुपूरण कर सकती है तथा आवश्यक निर्देश जारी कर सकती है, बशर्ते कि ऐसे निर्देश पूर्व में बनाए गए नियमों के असंगत अथवा उनके प्रतिकूल न हों।

कानून की इस व्याख्या पर कोई विवाद नहीं हो सकता, जो संत राम शर्मा मामले के बाद सुनाए गए कई फैसलों में भी अच्छी तरह से स्थापित है। हालाँकि, इस मामले में जो सवाल उठाया गया है, वह बिल्कुल अलग है।

8. यह एक सर्वमान्य स्थिति है कि ग्रेच्युटी और पेंशन कोई वरदान नहीं हैं। एक कर्मचारी अपनी लंबी, निरंतर, निष्ठावान और निष्कलंक सेवा के बल पर ये लाभ अर्जित करता है। डी.एस. नाकारा बनाम भारत संघ [(1983) 1एससीसी 305] में न्यायमूर्ति डी.ए. देसाई ने, जिन्होंने पीठ की ओर से अपनी अनूठी शैली में, निम्नलिखित शब्दों में बात की थी, इसे वैचारिक रूप से बहुत स्पष्ट रूप से वर्णित किया है: (एससीसी पृष्ठ 319-20, अनुच्छेद 18-20)

18. प्रतिवादियों का दृष्टिकोण एक महत्वपूर्ण और अत्यंत कठिन प्रश्न उठाता है कि पेंशन का भुगतान क्यों किया जाता है। और इसे उदार बनाने की आवश्यकता क्यों पड़ी? क्या नियोक्ता, जिसमें राज्य भी शामिल है, पेंशन देने के लिए बाध्य है? क्या नियोक्ता पर पूर्व कर्मचारी के लिए रोजगार अनुबंध समाप्त होने और कर्मचारी द्वारा सेवा प्रदान करना बंद कर देने के बाद भी कोई दायित्व है?

19. पेंशन क्या है? पेंशन के लक्ष्य क्या हैं? इसका उद्देश्य क्या है, यदि कोई है, तो वह किस जनहित या उद्देश्य की पूर्ति करना चाहता है? यदि इसका उद्देश्य कोई जनहित है, तो क्या किसी निश्चित तिथि से पहले और बाद में सेवानिवृत्ति के ऐसे कृत्रिम विभाजन से वह बाधित होता है? हमें इन और प्रासंगिक प्रश्नों के उत्तर खोजने की आवश्यकता है ताकि इस याचिका के पक्षकारों के बीच न्यायोचित न्याय सुनिश्चित हो सके।

20. पेंशन एक उपहार है, नियोक्ता की इच्छा या कृपा पर निर्भर एक निःशुल्क भुगतान है, जो अधिकार के रूप में दावा करने योग्य नहीं है और इसलिए, पेंशन के किसी भी अधिकार को अदालत के माध्यम से लागू नहीं किया जा सकता है, की पुरानी धारणा को देवकीनंदन प्रसाद बनाम बिहार राज्य [(1971) 2 एससीसी 330] में 9 डब्ल्यू.पी. संख्या 13798/2013 संविधान पीठ के फैसले से खारिज कर दिया गया है, जिसमें इस न्यायालय ने आधिकारिक तौर पर फैसला सुनाया कि पेंशन एक अधिकार है और इसका भुगतान सरकार के विवेक पर निर्भर नहीं करता है बल्कि नियमों द्वारा शासित होता है और उन नियमों के अंतर्गत आने वाला सरकारी कर्मचारी पेंशन का दावा करने का हकदार है। आगे यह माना गया कि पेंशन का अनुदान किसी के विवेक पर निर्भर नहीं करता है। यह केवल सेवा और अन्य संबद्ध मामलों को ध्यान में रखते हुए राशि को निर्धारित करने के उद्देश्य से है कि

प्राधिकारी के लिए उस आशय का आदेश पारित करना आवश्यक हो सकता है पंजाब राज्य बनाम इकबाल सिंह [(1976) 2 एससीसी 1] में इस दृष्टिकोण की पुनः पुष्टि की गई।

इस प्रकार, यह एक कर्मचारी को कड़ी मेहनत से अर्जित लाभ है और "संपत्ति" की प्रकृति का है। संपत्ति के इस अधिकार को भारत के संविधान के अनुच्छेद 300-ए के प्रावधानों के अनुसार, कानूनी प्रक्रिया के बिना नहीं छीना जा सकता।

9. कानूनी स्थिति की व्याख्या करने के बाद, आइए सबसे पहले पेंशन जारी करने से संबंधित नियमों पर चर्चा करें।

10. वर्तमान मामला झारखंड राज्य पर लागू बिहार पेंशन नियमों द्वारा शासित है। उक्त पेंशन नियमों का नियम 43(ख) राज्य सरकार को कुछ परिस्थितियों में पेंशन या उसके किसी भाग को रोकने या वापस लेने की शक्ति प्रदान करता है। यह नियम 43(ख) इस प्रकार है:

> "43. (ख) राज्य सरकार अपने पास पेंशन या उसके किसी भाग को, चाहे स्थायी रूप से या निर्दिष्ट अवधि के लिए, रोकने या वापस लेने का अधिकार सुरक्षित रखती है, और यदि पेंशनभोगी विभागीय या न्यायिक कार्यवाही में गंभीर कदाचार का दोषी पाया जाता है; या सेवानिवृत्ति के बाद पुनर्नियोजन पर की गई सेवा सहित अपने सेवाकाल के दौरान कदाचार या लापरवाही से सरकार को आर्थिक हानि पहुँचाने का दोषी पाया जाता है, तो सरकार को हुई किसी भी आर्थिक हानि की पूरी या आंशिक राशि की पेंशन से वसूली का आदेश देने का अधिकार सुरक्षित रखती है:"

11. उपर्युक्त नियम 43(बी) को पढ़ने से निम्नलिखित स्थिति उभरती है:

(i) राज्य सरकार को पेंशन या उसके किसी भाग को रोकने या वापस लेने की शक्ति है, जब पेंशनभोगी विभागीय कार्यवाही या न्यायिक कार्यवाही में गंभीर कदाचार का दोषी पाया जाता है।

(ii) यह प्रावधान राज्य को विभागीय कार्यवाही या न्यायिक कार्यवाही लंबित रहने के दौरान उक्त शक्ति का प्रयोग करने का अधिकार नहीं देता है।

(iii) उपरोक्त कार्यवाही के परिणाम पर विचार किए बिना, इस नियम के तहत राज्य को अवकाश नकदीकरण रोकने की शक्ति प्रदान नहीं की गई है।

(iv) इस शक्ति का प्रयोग केवल तभी किया जा सकता है जब कार्यवाही दोषी पाए जाने पर समाप्त हो जाए, इससे पहले नहीं।

12. नियम 43(बी) में एक प्रावधान यह भी है कि:

> "(क) ऐसी विभागीय कार्यवाहियाँ, यदि सरकारी सेवक के सेवानिवृत्ति से पूर्व या पुनर्नियोजन के दौरान ड्यूटी पर रहते समय संस्थित नहीं की गई हैं;
>
> (i) राज्य सरकार की मंजूरी के बिना संस्थित नहीं की जाएंगी;
>
> (ii) ऐसी घटना के संबंध में होंगी जो ऐसी कार्यवाहियों के संस्थित होने से चार वर्ष से अधिक पूर्व नहीं हुई हों; और
>
> (iii) ऐसे प्राधिकारी द्वारा और ऐसे स्थान या स्थानों पर संचालित की जाएंगी जैसा कि राज्य सरकार निर्देशित करे और उन कार्यवाहियों पर लागू प्रक्रिया के अनुसार संचालित की जाएंगी जिन पर सेवा से बर्खास्तगी का आदेश दिया जा सकता है—

(ख) न्यायिक कार्यवाहियाँ, यदि सरकारी सेवक के सेवानिवृत्ति से पूर्व या पुनर्नियोजन के दौरान ड्यूटी पर रहते समय संस्थित नहीं की गई हैं, तो खंड (क) के उपखंड (ii) के अनुसार संस्थित की गई होंगी; और

(ग) अंतिम आदेश पारित करने से पूर्व बिहार लोक सेवा आयोग से परामर्श किया जाएगा।

यह स्पष्ट है कि यह प्रावधान कार्यवाही शुरू करने के बारे में बात करता है। कार्यवाही शुरू करने के लिए, नियम 43(ख) कुछ शर्तें रखता है, अर्थात् नियम 43(ख) में निर्दिष्ट विभागीय कार्यवाही, यदि सरकारी कर्मचारी के कर्तव्य पर रहते हुए शुरू नहीं की गई है, तो उसे निम्नलिखित के अलावा शुरू नहीं किया जाएगा:

(क) सरकार की मंजूरी से,

(ख) यह ऐसी घटना के संबंध में होगा जो कार्यवाही शुरू होने से चार वर्ष से अधिक पूर्व घटित न हुई हो।

(ग) ऐसी कार्यवाही जांच अधिकारी द्वारा उन कार्यवाहियों के अनुसार संचालित की जाएगी जिनके द्वारा सेवाओं को बर्खास्त किया जा सकता है।

इस प्रकार, जहां तक प्रावधान का संबंध है, वह कार्यवाही शुरू करने की शर्त और सीमा अवधि से संबंधित है जिसके भीतर ऐसी कार्यवाही शुरू की जा सकती है।

13. नियम 43(ख) को पढ़ने से यह स्पष्ट हो जाता है कि विभागीय जाँच पूरी होने के बाद भी, सरकार को पेंशन आदि रोकने की अनुमति केवल तभी है जब विभागीय जाँच या न्यायिक कार्यवाही में यह निष्कर्ष दर्ज हो कि कर्मचारी ने अपने पद पर रहते हुए अपने कर्तव्य

निर्वहन में गंभीर कदाचार किया है। नियमों में ऐसी विभागीय कार्यवाही या न्यायिक कार्यवाही लंबित रहने पर पेंशन/ग्रेच्युटी रोकने का कोई प्रावधान नहीं है।

14. पेंशन प्राप्त करने के अधिकार को देवकीनंदन प्रसाद बनाम बिहार राज्य [(1971) 2 एससीसी 330] में इस न्यायालय की संविधान पीठ के फैसले द्वारा संपत्ति के अधिकार के रूप में मान्यता दी गई थी, जैसा कि निम्नलिखित चर्चा से स्पष्ट है: (एससीसी पृ. 342-43, पैरा 27-33)

> "27. विचारणीय अंतिम प्रश्न यह है कि क्या किसी सरकारी कर्मचारी द्वारा पेंशन प्राप्त करने का अधिकार संपत्ति है, ताकि वह संविधान के अनुच्छेद 19(1)(एफ) और 31(1) के अंतर्गत आ सके। इस प्रश्न का निर्णय इस बात पर विचार करने के लिए किया जाना आवश्यक है कि क्या रिट याचिका अनुच्छेद 32 के अंतर्गत विचारणीय है। इस पहलू पर हम पहले ही विचार कर चुके हैं और अब हम इस पर विचार करने जा रहे हैं।
>
> 28. याचिकाकर्ता के अनुसार पेंशन प्राप्त करने का अधिकार संपत्ति है और प्रतिवादियों ने 12-6-1968 के एक कार्यकारी आदेश द्वारा गलत तरीके से उनकी पेंशन रोक दी है। यह आदेश संविधान के अनुच्छेद 19(1)(एफ) और 31(1) के तहत उनके मौलिक अधिकारों को प्रभावित करता है। जैसा कि हम पहले ही संकेत कर चुके हैं, प्रतिवादी याचिकाकर्ता के पेंशन पाने के अधिकार पर विवाद नहीं करते हैं, लेकिन 5-8-1996 को पारित आदेश के लिए। प्रति-शपथ पत्र में केवल एक स्पष्ट कथन है कि विचार के लिए किसी भी मौलिक अधिकार का कोई प्रश्न नहीं उठता है। प्रतिवादियों के विद्वान अधिवक्ता श्री झा यह स्थिति लेने के लिए तैयार नहीं थे कि पेंशन प्राप्त करने के अधिकार को

किसी भी परिस्थिति में संपत्ति नहीं माना जा सकता है। उनके अनुसार, इस मामले में, राज्य द्वारा पेंशन देने का कोई आदेश पारित नहीं किया गया है। हमने विद्वान अधिवक्ता से यह आग्रह किया कि यदि राज्य ने पेंशन देने का आदेश पारित किया था और बाद में उस आदेश से मुकर गया, तो बाद के आदेश को याचिकाकर्ता के संपत्ति के संबंध में अधिकार को प्रभावित करने वाला माना जा सकता है ताकि संविधान के अनुच्छेद 19(1)(एफ) और 31(1) को आकर्षित किया जा सके।

29. हम प्रतिवादियों के विद्वान अधिवक्ता के तर्क को स्वीकार करने के लिए इच्छुक नहीं हैं। पेंशन नियमों के महत्वपूर्ण प्रावधानों का हवाला देकर, हम पहले ही संकेत दे चुके हैं कि पेंशन प्रदान करना प्राधिकारियों द्वारा इस आशय का आदेश पारित करने पर निर्भर नहीं करता है। हो सकता है कि सेवा की अवधि और अन्य संबद्ध मामलों को ध्यान में रखते हुए राशि निर्धारित करने के प्रयोजनों के लिए, प्राधिकारियों के लिए इस आशय का आदेश पारित करना आवश्यक हो, लेकिन किसी अधिकारी को पेंशन प्राप्त करने का अधिकार उक्त आदेश के कारण नहीं, बल्कि नियमों के आधार पर प्राप्त होता है। हम पहले ही बता चुके हैं कि नियम, याचिकाकर्ताओं जैसे व्यक्तियों को उनमें उल्लिखित परिस्थितियों में पेंशन प्राप्त करने के अधिकार को स्पष्ट रूप से मान्यता देते हैं।

30. यह प्रश्न कि क्या किसी लोक सेवक को दी जाने वाली पेंशन अनुच्छेद 31(1) के अंतर्गत आने वाली संपत्ति है, पंजाब उच्च न्यायालय के समक्ष भगवंत सिंह बनाम भारत संघ [एआईआर 1962 पंजाब 503] के मामले में विचार के लिए आया था। न्यायालय ने माना था कि ऐसा अधिकार 'संपत्ति' है और इसमें

कोई भी हस्तक्षेप संविधान के अनुच्छेद 31(1) का उल्लंघन होगा। न्यायालय ने आगे कहा कि राज्य किसी कार्यकारी आदेश के जरिए लोक सेवक के पेंशन प्राप्त करने के अधिकार को पूरी तरह से कम या समाप्त नहीं कर सकता। यह निर्णय विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा दिया गया था। इस निर्णय पर भारत संघ द्वारा लेटर्स पेटेंट अपील दायर की गई थी। लेटर्स पेटेंट पीठ ने भारत संघ बनाम भगवंत सिंह [आईएलआर (1965) 2 पंजाब 1] के मामले में अपने निर्णय में विद्वान एकल न्यायाधीश के निर्णय को मंजूरी दी थी। लेटर्स पेटेंट बेंच ने माना कि किसी लोक सेवक को उसकी सेवानिवृत्ति पर दी जाने वाली पेंशन संविधान के अनुच्छेद 31(1) के अर्थ में 'संपत्ति' है और उसे इससे केवल विधिक प्राधिकारी द्वारा ही वंचित किया जा सकता है और पेंशन के अस्वीकार या रद्द होने मात्र से उसकी संपत्ति समाप्त नहीं हो जाती। यह भी माना गया कि 'संपत्ति' के रूप में पेंशन के स्वरूप में किसी व्यक्ति विशेष या प्राधिकारी की इच्छा से ऐसा परिवर्तन संभव नहीं है।

31. यह मामला के.आर. एरी बनाम पंजाब राज्य [एआईआर 1967 पंजाब 279] के मामले में पंजाब एवं हरियाणा उच्च न्यायालय की पूर्ण पीठ के समक्ष पुनः आया। उच्च न्यायालय को एक अधिकारी के पेंशन पाने के अधिकार की प्रकृति पर विचार करना था। बहुमत ने उसी उच्च न्यायालय के उपर्युक्त दो पूर्व निर्णयों में प्रतिपादित सिद्धांतों को अनुमोदनपूर्वक उद्धृत किया और यह निर्णय दिया कि पेंशन को सरकार की इच्छा और प्रसन्नता पर देय दान नहीं माना जाना चाहिए और सेवानिवृत्ति पेंशन का अधिकार, उसकी राशि सहित, एक सरकारी कर्मचारी में निहित एक मूल्यवान अधिकार है। बहुमत ने यह भी निर्णय दिया कि यद्यपि अधिकारी को उसकी ओर से चूक या कदाचार के

लिए दंड लगाए जाने के विरुद्ध कारण बताने का अवसर पहले ही दिया जा चुका है और वह दोषी पाया गया है, फिर भी, जब किसी अधिकारी के विरुद्ध पहले ही सिद्ध किए जा चुके कदाचार के आधार पर उसे देय पेंशन की राशि में कटौती की मांग की जाती है, तो उस संबंध में कारण बताने का एक और अवसर अधिकारी को दिया जाना चाहिए। आगे अवसर दिए जाने के संबंध में यह विचार विद्वान न्यायाधीशों द्वारा संबंधित पंजाब सिविल सेवा नियमों के आधार पर व्यक्त किया गया था। लेकिन विद्वान मुख्य न्यायाधीश अपने असहमतिपूर्ण निर्णय में बहुमत से सहमत होने के लिए तैयार नहीं थे कि ऐसी परिस्थितियों में किसी अधिकारी को एक और अवसर दिया जाना चाहिए जब राज्य द्वारा देय पेंशन की राशि में कटौती की जाती है। इस मामले में, हमारे लिए इस प्रश्न पर विचार करना आवश्यक नहीं है कि क्या पहले से की गई अनुशासनात्मक कार्रवाई के आधार पर पेंशन कम करने या देने से इनकार करने की कार्रवाई करने से पहले, किसी अधिकारी को कारण बताओ नोटिस दिया जाना चाहिए। यह प्रश्न हमारे समक्ष विचारणीय नहीं है। न ही हम किसी अधिकारी की सेवानिवृत्ति के बाद पहली बार पेंशन कम करने या रोकने से पहले प्राधिकारियों द्वारा अपनाई जाने वाली प्रक्रिया, यदि कोई हो, के संबंध में आगे के प्रश्न से चिंतित हैं। इसलिए हम इस पहलू पर उपरोक्त पंजाब उच्च न्यायालय के निर्णय में बहुमत और अल्पमत न्यायाधीशों द्वारा व्यक्त विचारों के संबंध में कोई राय व्यक्त नहीं करते हैं। लेकिन हम बहुमत के इस दृष्टिकोण से सहमत हैं कि उसने अपने पहले के निर्णय को स्वीकार किया है कि पेंशन सरकार की इच्छा और प्रसन्नता पर देय कोई दान नहीं है, बल्कि पेंशन का अधिकार एक सरकारी कर्मचारी का एक मूल्यवान अधिकार है।32. मध्य प्रदेश राज्य

बनाम रानोजीराव शिंदे [एआईआर 1968 एससी 1053] में इस न्यायालय को इस प्रश्न पर विचार करना था कि क्या संविधान के अनुच्छेद 19(1)(एफ) और 31(1) में दिए गए अर्थ के अंतर्गत 'नकद अनुदान' 'संपत्ति' है। इस न्यायालय ने इसे संपत्ति माना और कहा कि 'यह स्पष्ट है कि धनराशि का अधिकार संपत्ति है।'

'

33. उपरोक्त निर्णयों पर समुचित ध्यान देते हुए, हमारी राय है कि अनुच्छेद 31(1) के तहत याचिकाकर्ता का पेंशन प्राप्त करने का अधिकार संपत्ति है और केवल एक कार्यकारी आदेश द्वारा राज्य को इसे रोकने की कोई शक्ति नहीं है। इसी तरह, उक्त दावा अनुच्छेद 19(1)(एफ) के तहत भी संपत्ति है और यह अनुच्छेद 19 के खंड (5) द्वारा सुरक्षित नहीं है। इसलिए, यह इस प्रकार है कि पेंशन प्राप्त करने के याचिकाकर्ता के अधिकार को अस्वीकार करने वाला 12-6-1968 का आदेश संविधान के अनुच्छेद 19(1)(एफ) और 31(1) के तहत याचिकाकर्ता के मौलिक अधिकार को प्रभावित करता है, और इस तरह अनुच्छेद 32 के तहत रिट याचिका पोषणीय है। यह हो सकता है कि पेंशन अधिनियम (1871 का 23) के तहत एक सिविल कोर्ट के खिलाफ इसमें वर्णित मामलों से संबंधित किसी भी मुकदमे पर विचार करने पर रोक है। यह राज्य को कानून के अनुसार पेंशन के भुगतान के लिए याचिकाकर्ता के दावे पर उचित रूप से विचार करने के लिए परमादेश रिट जारी करने के रास्ते में नहीं आता है।""

15. पश्चिम बंगाल राज्य बनाम हरेश सी. बनर्जी [(2006)7 एससीसी 651] में इस न्यायालय ने माना कि संविधान (चवालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1978 द्वारा 20-6-1979 से अनुच्छेद 19(1)(एफ) और अनुच्छेद 31(1) के निरसन के बाद भी, संपत्ति का अधिकार मौलिक

> अधिकार नहीं रहा, यह अभी भी एक संवैधानिक अधिकार था, जैसा कि संविधान के अनुच्छेद 300-ए में प्रदान किया गया है। पेंशन प्राप्त करने के अधिकार को संपत्ति के अधिकार के रूप में माना गया। अन्यथा, उस मामले में चुनौती पश्चिम बंगाल सेवा (मृत्यु-सह-सेवानिवृत्ति लाभ) नियम, 1971 के नियम 10(1) की शक्तियों के विरुद्ध थी, जो राज्यपाल को कुछ परिस्थितियों में पेंशन या उसके किसी भाग को रोकने या वापस लेने का अधिकार प्रदान करता था और उक्त चुनौती को इस न्यायालय ने खारिज कर दिया था।"

कानून के उपर्युक्त प्रतिपादन के अनुसार, यह स्पष्ट है कि किसी कर्मचारी की पेंशन रोकने के लिए नियोक्ता को सशक्त बनाने वाले किसी विशिष्ट प्रावधान के अभाव में, उसे रोका नहीं जा सकता।

20. 1996 के नियम 90 के अंतर्गत निहित प्रावधान पर गौर करने से स्पष्ट है कि ग्रेच्युटी की राशि विभागीय और न्यायिक कार्यवाही के समापन पर निर्भर करती है। इस प्रकार, यदि कोई व्यक्ति न्यायिक कार्यवाही में बरी हो गया है या विभागीय कार्यवाही में दोषमुक्त हो गया है, तो ग्रेच्युटी की राशि जारी की जाएगी।

21. इसलिए, यह स्पष्ट है कि, बरी किए जाने के फैसले के खिलाफ अपीलीय न्यायालय के समक्ष आपराधिक अपील दायर करने मात्र को 1996 के नियम 90 के साथ नियम 7 के अर्थ में किसी व्यक्ति के खिलाफ आपराधिक मुकदमे या आपराधिक कार्यवाही की निरंतरता के रूप में नहीं माना जा सकता है, इसलिए,

इन परिस्थितियों में, नियम 90 के तहत निहित प्रतिबंध ऐसे समान मामलों में लागू नहीं होता है।

22. परिणामस्वरूप, यह रिट याचिका स्वीकार की जाती है। प्रतिवादियों को निर्देश दिया जाता है कि वे याचिकाकर्ता को ग्रेच्युटी राशि, बिना किसी और विलंब के, देय तिथि से उसके वास्तविक भुगतान तक 9% प्रति वर्ष की दर से ब्याज सहित, तत्काल जारी करें।

23. यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि प्रतिवादीगण इस आदेश की प्रमाणित प्रति प्राप्त होने की तिथि से तीन माह की अवधि के भीतर इस न्यायालय द्वारा पारित आदेश का अनुपालन करेंगे।

24. लंबित समस्त आवेदन, यदि कोई हों, तदनुसार निस्तारित किए जाते हैं।

(अनूप कुमार ढंड),जे

के यू डी/105

"अस्वीकरण- इस निर्णय का अनुवाद स्थानीय भाषा में किया जा रहा है, एवं इसका प्रयोग केवल पक्षकार इसको समझने के लिए उनकी भाशा में कर सकेगे एवं यह किसी अन्य प्रयोजन में काम नहीं ली जायेगी। सभी अधिकारिक एवं व्यवहारिक उद्देश्यों के लिए उक्त निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही विश्वसनीय माना जायेगा एवं निश्पादन एवं क्रियान्वयन में भी उसी को उपयोग में लिया जायेगा।"

Tarun Mehra

Advocate